भाषाविज्ञान

भाषाविज्ञान भाषा के अध्ययन की वह शाखा है जिसमें भाषा की उत्पत्ति, स्वरूप, विकास आदि का वैज्ञानिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाता है। भाषाविज्ञान, भाषा के स्वरूप, अर्थ और सन्दर्भ का विश्लेषण करता है। भाषा के दस्तावेजीकरण और विवेचन का सबसे प्राचीन कार्य ६ठी शताब्दी के महान भारतीय वैयाकरण पाणिनि ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ अष्टाध्यायी में किया है।
भाषा विज्ञान के अध्ययेता 'भाषाविज्ञानी' कहलाते हैं। भाषाविज्ञान, व्याकरण से भिन्न है। व्याकरण में किसी भाषा का कार्यात्मक अध्ययन (functional description) किया जाता है जबकि भाषाविज्ञानी इसके आगे जाकर भाषा का अत्यन्त व्यापक अध्ययन करता है। अध्ययन के अनेक विषयों में से आजकल भाषा-विज्ञान को विशेष महत्त्व दिया जा रहा है।

एक भाषा-अध्ययन समबन्धी ग्रन्थ ही है।
संस्कृत साहित्य में दर्शन एवं साहित्यशास्त्रीय ग्रन्थों में भी हमें 'शब्द' 'अर्थ', 'रस' 'भाव' के सूक्ष्म विवेचन के अन्तर्गत भाषा वैज्ञानिक चर्चाओं के ही संकेत प्राप्त होते हैं। संस्कृत-साहित्य में यत्र-तत्र उपलब्ध होने वाली भाषा-विचार-विषयक सामग्री ही निश्चित रूप से वर्तमान भाषा-विज्ञान की आधारशिला कही जा सकती है।
आधुनिक विषय के रूप में भाषा-विज्ञान का सूत्रपात यूरोप में सन 1786 ई0 में सर विलियम जोन्स नामक विद्वान द्वारा किया गया माना जाता है। संस्कृत भाषा के अध्ययन के प्रसंग में सर विलियम जोन्स ने ही सर्वप्रथम संस्कृत, ग्रीक और लैटिन भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इस संभावना को व्यक्त किया था कि संभवतः इन तीनों भाषाओं के मूल में कोई एक भाषा रूप ही आधार बना हुआ है। अतः इन तीनों भाषाओं (संस्कृत, ग्रीक और लैटिन) के बीच एक सूक्ष्म संबंध सूत्र अवश्य विद्यमान है। भाषाओं का इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन ही आधुनकि भाषा-विज्ञान के क्षेत्र का पहला कदम बना।

भाषा-विज्ञान के अध्ययन के लाभ

भाषा-विज्ञान के अध्ययन से हमें अनेक लाभ होते हैं, जैसे-

1. अपनी चिर-परिचित भाषा के विषय में जिज्ञासा की तृप्ति या शंकाओं का निर्मूलन।
2. ऐतिहासिक तथा प्रागैतिहासिक संस्कृति का परिचय।
3. किसी जाति या सम्पूर्ण मानवता के मानसिक विकास का परिचय।
4. प्राचीन साहित्य का अर्थ, उच्चारण एवं प्रयोग सम्बन्धी अनेक समस्याओं का समाधान।
5. विश्व के लिए एक भाषा का विकास।
6. विदेशी भाषाओं को सीखने में सहायता।
7. अनुवाद करने वाली तथा स्वयं टाइप करने वाली एवं इसी प्रकार की मशीनों के विकास और निर्माण में सहायता।
8. भाषा, लिपि आदि में सरलता, शुद्धता आदि की दृष्टि से परिवर्तन-परिवर्द्धन में सहायता।

इन सभी लाभों की दृष्टि से आज के युग में भाषा-विज्ञान को एक अत्यन्त उपयोगी विषय माना जा रहा है और उसके अध्ययन के क्षेत्र में नित्य नवीन विकास हो रहा है।

भाषा-विज्ञान की परिभाषा

डॉ॰ **श्यामसुन्दर दास** ने अपने ग्रन्थ भाषा रहस्य में लिखा है-

"भाषा-विज्ञान भाषा की उत्पत्ति, उसकी बनावट, उसके विकास तथा उसके ह्रास की वैज्ञानिक व्याख्या करता है।"

मंगल देव शास्त्री (तुलनात्मक भाषाशास्त्र) के शब्दों में-

"भाषा-विज्ञान उस विज्ञान को कहते हैं जिसमें (क) सामान्य रूप से मानवी भाषा (ख) किसी विशेष भाषा की रचना और इतिहास का और अन्ततः (ग) भाषाओं या प्रादेशिक भाषाओं के वर्गों की पारस्परिक समानताओं और विशेषताओं का तुलनात्मक विचार किया जाता है।"

डॉ॰ **भोलानाथ तिवारी** के 'भाषा-विज्ञान' ग्रन्थ में यह परिभाषा इस प्रकार दी गई है-

"जिस विज्ञान के अन्तर्गत वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन के सहारे भाषा की उत्पत्ति, गठन, प्रकृति एवं विकास आदि की सम्यक् व्याख्या करते हुए, इन सभी के विषय में सिद्धान्तों का निर्धारण हो, उसे भाषा विज्ञान कहते हैं।"

ऊपर दी गई सभी परिभाषाओं पर विचार करने से ज्ञात होता है कि उनमें परस्पर कोई अन्तर नहीं है। डॉ॰ श्यामसुन्दर दास की परिभाषा में जहाँ केवल भाषाविज्ञान पर ही दृष्टि केन्द्रित रही है वहीं मंगलदेव शास्त्री एवं भोलानाथ तिवारी ने अपनी परिभाषाओं में भाषा विज्ञान के अध्ययन के प्रकारों को भी समाहित कर लिया है। परिभाषा वह अच्छी होती है जो संक्षिप्त हो और स्पष्ट हो। इस प्रकार हम भाषा-विज्ञान की एक नवीन परिभाषा इस प्रकार दे सकते हैं- "जिस अध्ययन के द्वारा मानवीय भाषाओं का सूक्ष्म और विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाए, उसे भाषा-विज्ञान कहा जाता है।"

दूसरे शब्दों में भाषा-विज्ञान वह है जिसमें मानवीय भाषाओं का सूक्ष्म और व्यापक वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है।

साहित्य और भाषा-विज्ञान

भाषा के प्रचलित वर्तमान स्वरूप को छोड़ कर शेष सारी अध्ययन सामग्री भाषा-विज्ञान को साहित्य से ही उपलब्ध होती है। यदि आज हमारे सामने संस्कृत, ग्रीक और अवेस्ता साहित्य न होता तो भाषा-विज्ञान कभी यह जानने में सफल न होता कि ये तीनों भाषाएँ किसी एक मूल भाषा से निकली हैं। इसी प्रकार आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक का हिन्दी साहित्य हमारे सामने न होता तो भाषा-विज्ञान हिन्दी भाषा के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन किस प्रकार कर पाता।

भाषा-विज्ञान किसी प्रकार से भी भाषा का अध्ययन करे उसे पग-पग पर साहित्य की सहायता लेनी पड़ती है। बुन्देलखण्ड के नटखट बालकों के मुंह से यह सुन कर-

ओना मासी धम

बाप पढ़े ना हम

व्याकरण कहता है कि यह क्या बला है, प्राचीन साहित्य का अध्ययन ही उसे बतलाएगा कि शाकटायन के प्रथम सूत्र 'ऊँ नमः सिद्धम्' का ही यह बिगड़ा हुआ रूप है।

साहित्य भी भाषा-विज्ञान की सहायता से अपनी अनेक समस्याओं का समाधान खोजने में सफल हो जाता है। डॉ॰ वासुदेव शरण अग्रवाल ने भाषा-विज्ञान के सिद्धान्तों के आधार पर जायसीकृत 'पद्मावत' के बहुत से शब्दों को उनके मूल रूपों से जोड़ कर उनके अर्थों को स्पष्ट किया है। साथ ही शुद्ध पाठ के निर्धारण में भी इससे पर्याप्त सहायता ली है। अतः साहित्य और भाषा-विज्ञान दोनों एक दूसरे के सहायक हैं।

मनोविज्ञान और भाषा-विज्ञान

भाषा हमारे भावों-विचारों अर्थात् मन का प्रतिबिम्ब होती है अतः भाषा की सहायता से बहुत से समस्याओं को सुलझाया जा सकता है। विशेष रूप से अर्थविज्ञान तो मनोविज्ञान पर पूरी तरह से आधारित है। वाक्य-विज्ञान के अध्ययन में भी मनोविज्ञान से पर्याप्त सहायता मिलती है। कभी-कभी ध्वनि-परिवर्तन का कारण जानने के लिए भी मनोविज्ञान हमारी सहायता करता है। भाषा की उत्पत्ति तथा प्रारम्भिक रूप की जानकारी में भी बाल-मनोविज्ञान तथा अविकसित लोगों का मनोविज्ञान हमारी सहायता करता है।

मनोविज्ञान को भी अपनी चिकित्सा-पद्धति में रोगी की ऊलजलूल बातों का अर्थ जानने के लिए भाषा-विज्ञान से सहायता लेनी पड़ती है। अतः भाषा-विज्ञान की सहायता से एक मनोविज्ञानी रोगी की मनोग्रन्थियों का पता लगाने में सफल हो सकता है। भाषा-विज्ञान और मनोविज्ञान के घनिष्ठ सम्बन्धों के कारण ही आजकल भाषा मनोविज्ञान (Linguistic Psychology) या साइकोलिंगिंवस्टिक्स (Psycholinguistics) नामक एक नयी अध्ययन-पद्धति का विकास हो रहा है।

भूगोल और भाषा-विज्ञान

भाषा-विज्ञान और भूगोल का भी-गहरा सम्बन्ध है। कुछ लोगों के अनुसार किसी स्थान की भौगोलिक परिस्थितियों का उसकी भाषा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। किसी स्थान में बोली जाने वाली भाषा में वहाँ के पेड़-पौधे, पक्षी, जीव-जन्तु एवं अन्न आदि के लिए शब्द अवश्य मिलते हैं परन्तु यदि उनमें से किसी की समाप्ति हो जाए तो उसका नाम वहाँ की भाषा से भी जुदा हो जाता हैं। 'सोमलता' शब्द का प्रयोग आज हमारी भाषा में नहीं होता। इस लोप का कारण सम्भवतः भौगोलिक ही है। किसी स्थान में एक भाषा का दूर तक प्रसार न होना, भाषा में कम विकास होना तथा किसी स्थान में बहुत सी बोलियों का होना भी भौगोलिक परिस्थितियों का ही परिणाम होता है। दुर्गम पर्वतों पर रहने वाली जातियों का परस्पर कम सम्पर्क होने के कारण उनकी बोली प्रसार नहीं कर पाती। नदियों के आर-पार रहने वाले लोगों की बोली-भाषा सामान्य भाषा से हट कर भिन्न होती है। देशों, नगरों, नदियों तथा प्रान्तों आदि के नामों का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन करने में भूगोल बड़ी मनोरंजक सामग्री प्रदान करता है।

अर्थ-विचार के क्षेत्र में भी भूगोल भाषा-विज्ञान की सहायता करता है। 'उष्ट्र' का अर्थ भैंसा से ऊँट कैसे हो गया तथा 'सैंधव' का अर्थ घोड़ा और नमक ही क्यों हुआ, आदि समस्याओं पर विचार करने में भी भूगोल सहायता करता है। भाषा-विज्ञान की एक शाखा भाषा-भूगोल की अध्ययन-पद्धति तो ठीक भूगोल की ही भाँति होती है। इसी प्रकार किसी स्थान के प्रागैतिहासिक काल के भूगोल का अध्ययन करने में भाषा-विज्ञान भी पर्याप्त सहायक होता है।

स्वनविज्ञान

स्वानिकी या **स्वनविज्ञान** (Phonetics), भाषाविज्ञान की वह शाखा है जिसके अंतर्गत मानव द्वारा बोली जाने वाली ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है। यह बोली जाने वाली ध्वनियों के भौतिक गुण, उनके शारीरिक उत्पादन, श्रवण ग्रहण और तंत्रिका-शारीरिक बोध की प्रक्रियाओं से संबंधित है।

इतिहास

स्वानिकी का अध्ययन प्राचीन भारत मे लगभग २५०० वर्ष पहले से किया जाता था, इसका प्रमाण हमें पाणिनि द्वारा ५०० ई पू में रचित उनके संस्कृत के व्याकरण संबंधी ग्रंथ अष्टाध्यायी मे मिलता है, जिसमे व्यंजनों के उचारण के स्थान तथा उच्चारण की विधि का विस्तार से वर्णन किया गया है। आज की अधिकतर भारतीय लिपियों मे व्यंजनों का स्थान पाणिनि के वर्गीकरण पर आधारित है।

आधुनिक काल में स्वानिकी का अध्ययन जोशुआ स्टील (१७७९) तथा अलेक्जेण्डर बेल (१८६७) आदि के प्रयासों से आरम्भ हुआ।

स्वनविज्ञान का स्वरूप

भाषा की लघुत्तम इकाई 'स्वन' है। इसे ध्वनि नाम भी दिया जाता है। ध्वनि के अभाव में भाषा की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। भाषाविज्ञान में स्वन के अध्ययन संदर्भ को 'स्वनविज्ञान' की संज्ञा दी जाती है। ध्वनि शब्द ध्वन् धातु में इण् (इ) प्रत्यय के योग से बना है। भाषा विज्ञान के गंभीर अध्ययन में ध्वनिविज्ञान एक महत्त्वपूर्ण शाखा बन गई है। इसके लिए ध्वनिशास्त्र, ध्वन्यालोचन, स्वनविज्ञान, स्वनिति आदि नाम दिए गए हैं। अंग्रेजी में उसके लिए 'फोनेटिक्स' (phonetics) और 'फोनोलॉजी' (phonology) शब्दों का प्रयोग होता है। इन दोनों शब्दों की निर्मिति ग्रीक के 'फोन' (phone) से है।

स्वन (ध्वनि) के अध्ययन में तीन पक्ष सामने आते हैं-
(1) उत्पादक
(2) संवाहक
(3) संग्राहक
स्वन उत्पन्न करनेवाले व्यक्ति या वक्ता को स्वनउत्पादक की संज्ञा देते है। संग्राहक या ग्रहणकर्ता श्रोता होता है, जो ध्वनि को ग्रहण करता है। संवाहक या संवहन करनेवाला माध्यम जो मुख्यतः वायु की तरंगों के रूप में होता है। स्वन प्रक्रिया में तीनों अंगों की अनिवार्यता स्वतः सिद्ध है। जब मुख के विभिन्न अंगों में से किन्हीं दो या दों से अधिक अव्यवयों के सहयोग से ध्वनि उन्पन्न होगी तभी स्वन (ध्वनि) का अस्तित्व सम्भव है। ध्वनि-उत्पादक अवयवों की भूमिका के अभाव में स्वन का अस्तित्व असंभव है।
ध्वनि-उत्पादक अवयवों की उपयोगी भूमिका के बाद यदि संवाहक या संवहन माध्यम का अभाव होगा, तो स्वन का आभास असम्भव है। माना एक व्यक्ति एक वायु-अवरोधी (airtight) कक्ष में बैठ कर ध्वनि करता है, तो वायु तरंग कक्ष से बाहर नहीं आ पाती और बाहर का व्यक्ति ध्वनि-ग्रहण नहीं कर सकता है। इस प्रकार स्वन प्रक्रिया अवरुद्ध हो जाती है।
तृतीय अंग संग्राहक या श्रोता के अभाव में ध्वनि-उत्पादन का अस्तित्व स्वतः ही शून्य हो जाता है। इस प्रकार स्वन प्रक्रिया में वक्ता (उत्पादक), माध्यम (संग्राहक) तीनों का होना अनिवार्य होता है।

ध्वनि के सार्थक और निरर्थक दो स्वरूप हैं। भाषा विज्ञान में केवल सार्थक ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है। ध्वनि उत्पादन प्रक्रिया में वायु मुख या नाक दोनों ही भागों से निकलती है। इस प्रकार ध्वनि को अनुनासिक तथा निरनुनासिक दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। ध्वनियों के उच्चारण में वायु मुख-विवर के साथ नासिका-विवर से भी निकलती है। उसे अनुनासिक ध्वनि कहते हैं। जिन ध्वनियों के उच्चारण में वायु केवल मुख-विवर से निकले उसे निरनुनासिक या मौखिक ध्वनि कहते हैं। ध्वनि की तीव्रता और मंदता के आधार पर उसे नाद, श्वास तथा जपित, तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। जब ध्वनि उत्पादन में स्वर तंत्रियाँ एक दूसरे से मिली होती हैं, तो वायु उन्हें धक्का देकर बीच से बाहर आती है, ऐसी ध्वनि को नाद ध्वनि कहते हैं, यथा-ग्, घ्, ज् आदि। इसे सघोष ध्वनि भी कहते हैं। जब स्वर तंत्रियाँ एक दूसरे से दूर होती हैं तो निश्वास की वायु बिना घर्षण के सरलता से बाहर आती है। ऐसी ध्वनि को 'श्वास' या अघोष कहते हैं; यथा क्, त्, प् आदि। जब बहुत मंद ध्वनि होती है तो दोनों स्वर तंत्रियों के किसी कोने से वायु बाहर आती है। ऐसी ध्वनि को जपित ध्वनि कहते हैं।भाषा-अध्ययन में स्वनविज्ञान का विशेष महत्त्व है क्योंकि अन्य वृहत्तर इकाइयों का ज्ञान इसके ही आधार पर होती है। इसके ही अन्तर्गत विभिन्न ध्वनि उत्पादक अवयवों का अध्ययन किया जाता है। स्वनों के शुद्ध ज्ञान के पश्चात शुद्ध लेखन को सबल आधार मिल जाता है। उच्चारण में होनेवाले विविध संदर्भों के परिवर्तनों का ज्ञान भी सम्भव होता है। स्वनविज्ञान में विभिन्न ध्वनियों के अध्ययन के साथ उनके उत्पादन की प्रक्रिया का विस्तृत विश्लेषण किया जाता है। इसी अध्ययन क्रम में ध्वनि उत्पादक विभिन्न अंगों की रचना और उनकी भूमिका का भी अध्ययन किया जाता है। ध्वनिगुण और उसकी सार्थकता का निरूपण भी किया जाता है। स्वन के साथ 'स्वनिम' का भी विवेचन-विश्लेषण किया जाता है। भाषा की उच्चारणात्मक लघुत्तम इकाई अक्षर के स्वरूप और उनके वर्गीकरण पर भी विचार किया जाता है। समय, परिस्थिति और प्रयोगानुसार विभिन्न ध्वनियों में परिवर्तन होता रहता है। ध्वनि-परिवर्तन के संदर्भ में विभिन्न विद्वानों ने कुछ ध्वनि नियम निर्धारित किए हैं। इन नियमों के अध्ययन के साथ ध्वनि-परिवर्तन की दिशाओं और ध्वनि-परिवर्तन के कारणों पर विचार किया जाता है।

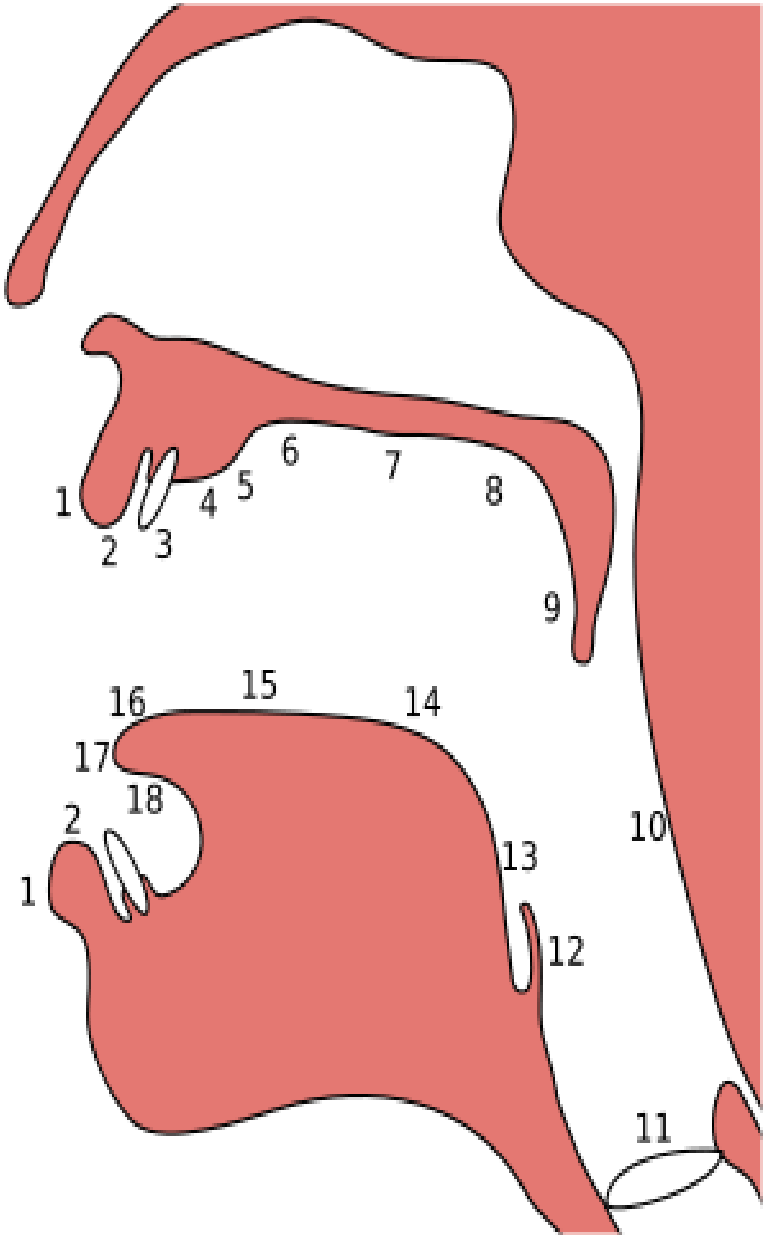

1. बाह्योष्ठ्य (exo-labial)
2. अन्तःओष्ठ्य (endo-labial)
3. दन्त्य (dental)
4. वर्त्स्य (alveolar)
5. post-alveolar
6. prä-palatal
7. तालव्य (palatal)
8. मृदुतालव्य (velar)
9. अलिजिह्वीय (uvular)
10. ग्रसनी से (pharyngal)
11. श्वासद्वारीय (glottal)
12. उपजिह्वीय (epiglottal)
13. जिह्वामूलीय (Radical)
14. पश्चपृष्ठीय (postero-dorsal)
15. अग्रपृष्ठीय (antero-dorsal)
16. जिह्वापाग्रीय (laminal)
17. जिह्वाग्रीय (apical)
18. sub-laminal

पदविज्ञान

भाषाविज्ञान में रूपिम की संरचनात्मक इकाई के आधार पर शब्द-रूप (अर्थात् पद) के अध्ययन को **पदविज्ञान** या **रूपविज्ञान** (मॉर्फोलोजी) कहते हैं। दूसरे शब्दों में, 'शब्द' को 'पद' में बदलने की प्रक्रिया के अध्ययन को रूपविज्ञान कहा जाता है।
रूपविज्ञान, भाषाविज्ञान का एक प्रमुख अंग है। इसके अंतर्गत पद के विभिन्न अंशों - मूल प्रकृति (baseform) तथा उपसर्ग, प्रत्यय, विभक्ति (affixation) - का सम्यक् विश्लेषणकिया जाता है इसलिये कतिपय भारतीय भाषाशास्त्रियों ने पदविज्ञान को "प्रकृति-प्रत्यय-विचार" का नाम भी दिया है।
भाषा के व्याकरण में पदविज्ञान का विशेष महत्त्व है। व्याकरण/भाषाविज्ञानी वाक्यों का वर्णन करता है और यह वर्णन यथासम्भव पूर्ण और लघु हो, इसके लिए वह पदों की कल्पना करता है। अतः उसे पदकार कहा गया है। पदों से चलकर ही हम वाक्यार्थ और वाक्योच्चारण तक पहुंचते हैं। "किसी भाषा के पदविभाग को ठीक-ठीक हृदयंगम करने का अर्थ है उस भाषा के व्याकरण का पूरा ज्ञान"।

रूप के अध्ययन की दृष्टि के आधार पर रूपविज्ञान के विभिन्न प्रकार गिनाए गए हैं-
वर्णनात्मक रूपविज्ञान- इसमें किसी भाषा या बोली के किसी एक समय के रूप या पद का अध्ययन होता है,
ऐतिहासिक रूपविज्ञान - इसमें भाषा या बोली के विभिन्न कालों के रूपों का अध्ययन कर उसमें रूप-रचना का इतिहास या विकास प्रस्तुत किया जाता है।
तुलनात्मक रूपविज्ञान - इसमें दो या अधिक भाषाओं के रूपों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।

भारतीय आचार्यों ने शब्दों की दो स्थितियाँ - सिद्ध एवं असिद्ध दी हैं। इनमें "असिद्ध" शब्द को केवल "शब्द" तथा "सिद्ध" शब्द को "पद" के रूप में परिणत किया जाता है। "सिद्धि" के सुंबत (नाम) एवं तिङंत (क्रिया) तथा "असिद्ध" के कई भेद प्रभेद किए गए हैं। यहाँ तक कि संस्कृत का प्रत्येक शब्द "धातुज" ठहराया गया है। व्याकरण शास्त्र का नामकरण एवं उनकी परिभाषा इसी प्रक्रिया को ध्यान में रख कर की गई है यथा, शब्दानुशसन (महर्षि पतंजलि एवं आचार्य हेमचंद्र) तथा "व्याक्रियंते विविच्यंते शब्दा: अनेन इति व्याकरणम्।" पाश्चात्य विद्वान् धात्वंश को आवश्यक नहीं मानते, वे आधार रूपांशों (base-elements) को नाम एवं आख्यात् दोनों के लिये अलग अलग स्वीकार करते हैं। वस्तुत: बहुत सी भाषाओं के लिये धात्वंश आवश्यक नहीं। इस प्रकार रूपांशों की परिभाषा पाश्चात्य विद्वान् ब्लूमफील्ड और नाइडा के अनुसार शब्द "भाषा की अर्थपूर्ण लघुतम इकाई" है। वह आधार रूपांशों तथा संबंध रूपांशों में विभक्त हो सकती है। उन्हें क्रम से भाषा के अर्थतत्व एवं संबंधतत्व कह सकते हैं।

अर्थतत्व तथा संबंधतत्व के पारस्परिक संबंधों के मुख्यत: तीन रूप उपलब्ध होते हैं। एक संयुक्त जहाँ दोनों अभिन्न रूप हो जाते हैं, दूसरा ईषत् संयुक्त या अर्धसंयुक्त; इसमें दोनों को पृथक पृथक पहचाना जा सकता है। तीसरे वियुक्त जहाँ दोनों अलग अलग रहकर अर्थ की अभिव्यक्ति करते हैं। संयुक्त रूप के अंतर्गत प्राचीन आर्य, सामी हामी आदि भाषाओं की गणना की गई है। इसमें मूल प्रकृति बदल जाती है। ग्रीक प्रथमा एक. बाउस, सं. गो:, ग्रीक पुं.द्वि. जुगोन, सं., युग्म संस्कृत पुंलिग पं.एक. अग्ने:, अरबी क़ित्ल (वैरी), कत्ल (मारा), कातिल (मारनेवाला), कुतिल (वह मारा गया) आदि।

वाक्यविज्ञान

किसी भाषा में जिन सिद्धान्तों एवं प्रक्रियाओं के द्वारा वाक्य बनते हैं, उनके अध्ययन को भाषा विज्ञान में **वाक्यविन्यास**, 'वाक्यविज्ञान' या सिन्टैक्स (syntax) कहते हैं। वाक्य के क्रमबद्ध अध्ययन का नाम 'वाक्यविज्ञान' कहते हैं। वाक्य विज्ञान, पदों के पारस्परिक संबंध का अध्ययन है। वाक्य भाषा का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है। मनुष्य अपने विचारों की अभिव्यक्ति वाक्यों के माधयम से ही करता है। अतः वाक्य भाषा की लघुतम पूर्ण इकाई है।

वाक्यविज्ञान का स्वरूप

वाक्य विज्ञान के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों का विचार किया जाता है- वाक्य की परिभाषा, वाक्यों और भाषा के अन्य अग् का सम्बन्धा, वाक्यों के प्रकार, वाक्यों में परिवर्तन, वाक्यों में पदों का क्रम, वाक्यों में परिवर्तन के कारण आदि।

वाक्य विज्ञान के स्वरूप के विषय में डॉ॰ कपिलदेव द्विवेदी ने विस्तार से विवेचन किया है। उनका मत इस प्रकार हैः-

वाक्य-विज्ञान में भाषा में प्रयुक्त विभिन्न पदों के परस्पर संबन्ध का विचार किया जाता है। अतएव वाक्य-विज्ञान में इन सभी विषयों का समावेश हो जाता है- वाक्य का स्वरूप, वाक्य की परिभाषा, वाक्य की रचना, वाक्य के अनिवार्य तत्त्व, वाक्य में पदों का विन्यास, वाक्यों के प्रकार, वाक्य का विभाजन, वाक्य में निकटस्थ अवयव, वाक्य में परिवर्तन, परिवर्तन की दिशाएँ, परिवर्तन के कारण, पदिम (Taxeme) आदि। इस प्रकार वाक्य-विज्ञान में वाक्य से संबद्ध सभी तत्वों का विवेचन किया जाता है।

पदविज्ञान और वाक्य-विज्ञान में अन्तर यह है कि पद-विज्ञान में पदों की रचना का विवेचन होता है। अतः उसमें पद विभाजन (संज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि), कारक, विभक्ति, वचन, लिंग, काल, पुरुष आदि के बोधाक शब्द किस प्रकार बनते हैं, इस पर विचार किया जाता है। वाक्य-विज्ञान उससे अगली कोटि है। इसमें पूर्वोक्त विधि से बने हुए पदों का कहाँ, किस प्रकार से रखने से अर्थ में क्या अन्तर होता है, आदि विषयों का विवेचन है। धवनि निर्मापक तत्त्व हैं। जैसे मिट्टी, कपास आदि; पद बने हुए वे तत्त्व हैं, जिनका उपयोग किया जा सकता है, जैसे- ईंट, वस्त्रा आदि; वाक्य वह रूप है, जो वास्तविक रूप में प्रयोग में आता है, जैसे- मकान, सिले वस्त्रा आदि। पद ईंट है तो वाक्य मकान या भवन। तात्त्विक दृष्टि से ध्वनि, पद और वाक्य में मौलिक अन्तर है। धवनि मूलतः उच्चारण से संबद्ध है। या शारीरिक व्यापार से उत्पन्न होती है, अतः ध्वनि में मुख्यतया शारीरिक व्यापार प्रधान है। पद में ध्वनि और सार्थकता दोनों का समन्वय है। ध्वनि शारीरिक पक्ष है और सार्थकता मानसिक पक्ष है। पद में शारीरिक और मानसिक दोनों तत्त्वों के समन्वय से वह वाक्य में प्रयोग के योग्य बन जाता है। सार्थकता का संबन्ध विचार से है। विचार मन का कार्य है, अतः पद में मानसिक व्यापार भी है। वाक्य में विचार, विचारों का समन्वय, सार्थक एवं समन्वित रूप में अभिव्यक्ति, ये सभी कार्य विचार और चिन्तन से संबद्ध है, अतः मानसिक कार्य है। वाक्य में मानसिक अथवा मनोवैज्ञानिक पक्ष मुख्य होता है। विचारों की पूर्ण अभिव्यक्ति वाक्य से होती है, अतः वाक्य ही भाषा का सूक्ष्मतम सार्थक इकाई माना जाता है। इनका भेद इस प्रकार भी प्रकट किया जा सकता है।

अर्थविज्ञान

भाषा के दायरे में शब्दों और वाक्यों के तात्पर्य का अध्ययन अर्थ-विज्ञान कहलाता है। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध से पहले अर्थ-विज्ञान को एक अलग अनुशासन के रूप में मान्यता नहीं थी। फ़्रांसीसी भाषा-शास्त्री मिशेल ब्रील ने इस अनुशासन की स्थापना की और इसे 'सीमेंटिक्स' का नाम दिया। बीसवीं सदी की शुरुआत में फ़र्दिनैंद द सॅस्यूर द्वारा प्रवर्तित भाषाई क्रांति के बाद से सीमेंटिक्स के पैर समाज-विज्ञान में जमते चले गये। सीमेंटिक्स का पहला काम है भाषाई श्रेणियों की पहचान करना और उन्हें उपयुक्त शब्दावली में व्याख्यायित करना। ऊपर से सहज पर भीतर से पेचीदा लगने वाली अर्थ- संबंधी कवायदें सीमेंटिक्स की मदद के बिना नहीं हो सकतीं। उदाहरण के लिए 'नश्वर होते हैं लोग' और 'नश्वर थे गाँधी' के बीच अर्थ-ग्रहण के अंतर पर दृष्टि डाल कर सीमेंटिक्स की उपयोगिता का पता लगाया जा सकता है। दूसरे वाक्य का निहितार्थ यह है कि गाँधी को अमर माना जाता था या गाँधी जैसे लोग भी नश्वर होते हैं। सीमेंटिक्स यह पता लगाता है कि अर्थ-ग्रहण का यह अंतर पैदा करने में भाषा कैसे काम करती है।

विचित्र बात यह है कि अर्थ-विज्ञान पर शुरुआत में भाषा-शास्त्रियों बजाय ने गहरी डाली। साठ के दशक से भाषाविदों ने भाषाई अर्थों के दो बुनियादी प्रकारों को रेखांकित करना शुरू किया। माना गया कि अर्थ की पहली किस्म तो भाषाई रूप में ही सहजात होती है। दूसरी किस्म का ताल्लुक उस रूप के बोले जाने और उस अभिव्यक्ति के संदर्भ के बीच अन्योन्यक्रिया से होता है। के अर्थ-निरूपण तीन के विभेदों के तहत किया जाता रहा है। इनमें पहला है बोध और संदर्भ के बीच का अंतर। दूसरा है शब्द के अर्थ और वाक्य के अर्थ का भेद। तीसरा है पाठ और संदर्भ के बीच का अंतर। इस तीसरे अंतर को अब सीमेंटिक्स से अलग करके भाषा-शास्त्रियों ने प्रैगमैटिक्स के रूप में नया अनुशासन बना दिया गया है। सीमेंटिक्स के तहत जिस भाषा का

संदर्भ सूची

- भाषा-विज्ञान की परिभाषा, अंग, महत्व, उपयोगिता।
- cdtripathi.blogspot.com › 2019/11 › blog-post_99
- भाषाविज्ञान - विकिपीडिया
- hi.wikipedia.org › wiki › भाषाविज्ञान
- **भाषा-विज्ञान के अध्ययन के लाभ**
- **साहित्य और भाषा-विज्ञान**
- की भूमिका का भी अध्ययन किया जाता है।
- स्वनविज्ञान - विकिपीडिया
- hi.wikipedia.org › wiki › स्वनविज्ञान
- पदविज्ञान - विकिपीडिया
- hi.wikipedia.org › wiki › पदविज्ञान
- अर्थविज्ञान - विकिपीडिया
- hi.wikipedia.org › wiki › अर्थविज्ञान